ROLE OF EDUCATION IN CHARACTER DEVELOPMENT

चारित्रिक विकास में शिक्षा की भूमिका (Role of Education in Character Development)

शिक्षा के क्षेत्र मे चारित्रिक विकास की महत्ता को कभी भी कम नहीं आका जा सकता। शिक्षा तभी सार्थक है जब वह सुयोग्य एवं उत्तरदायित्वों को समझने वाले नागरिकों का निर्माण कर सके और यह कार्य चरित्र निर्माण के बिना सम्पन्न नहीं हो सकता। इसलिए चाहे शिक्षा की कोइं भी प्रणाली क्यो न हो अथवा कोई स्तर या अवस्था क्यों न हो, चरित्र निर्माण प्रत्येक स्तर और अवस्था मे शिक्षा का एक मुख्य और आवश्यक उद्देश्य माना जाता है। आइए देखें, किस प्रकार शिक्षा बच्चों के चरित्र का ठीक-ठीक विकास करने में सहायक सिद्ध होती है और अध्यापक तथा विद्यालय बच्चों के चरित्र निर्माण में किस प्रकार अपना सहयोग प्रदान कर सकते हैं। सामान्यतया चरित्र विकास के कार्य मे कुछ निम्न सुझाव एवं तकनीक काफी उपयोगी सिद्ध हो सकते हैं :

1. मूल प्रवृत्तियों और संवेगों का उचित प्रशिक्षण (Proper training of instincts and emotions)—मूल प्रवृत्तियाँ चरित्र की आधारशिलाएँ हैं। इसलिए चरित्र निर्माण की दिशा मे सबसे पहला कार्य मूलप्रवृत्तियों का शोधन और उन्नयन करना है। व्यवहार को प्रभावित करने वाले विभिन्न संवेग मूलप्रवृत्तियो से ही पोषित होते हैं। इस तरह मूलप्रवृत्तियाँ और संवेग दोनों मिलकर मानव चरित्र को अच्छा और बुरा मोड़ प्रदान करने की सामर्थ्य रखते है। इसलिए सुन्दर और स्वस्थ चरित्र के लिए बच्चे की मूलप्रवृत्तियो और उसके संवेगों के उचित शोधन और प्रशिक्षण की आवश्यकता है। उदाहरण के लिए युद्धप्रियता नामक मूलप्रवृत्तियों और क्रोध के संवेग को शोधन और प्रशिक्षण के फलस्वरूप देशभक्ति तथा पीड़ितों एव शोषित पर दया दिखलाने जैसे उपयोगी कार्यों की ओर मोड़ा जा सकता है और इस तरह चरित्र निर्माण का कार्य भली-भाँति सम्पन्न किया जा सकता है।

2. इच्छा या संकल्प शक्ति का प्रशिक्षण (Training of will power)—निर्णय शक्ति और उचित समय पर उचित निर्णय लेने की क्षमता -- दोनों सशक्त चरित्र के बहुमूल्य तत्त्व हैं और इन दोनो तत्त्वों को इच्छा तथा संकल्प शक्ति द्वारा ही जीवन मिलता है। अतः बालकों की इच्छाओं तथा संकल्प शक्ति को दृढ़ बनाने के लिए हर सम्भव उपाय किये जाने चाहिए। दृढ संकल्प के अभाव में चारित्रिक कमजोरियाँ व्यक्तित्व पर हॉवी हो जाती हैं और उन्हें छोड देने का झूटा वायदा करता रहता है जबकि इच्छा या संकल्प शक्ति की दृढ़ता उसे चारित्रिक बुराइयो को छोड कर अच्छाइयों को ग्रहण करने मे पूरी-पूरी सहायता कर सकती हैं।

3. अच्छी आदतों का विकास (Development of good habits)—चरित्र को आदतों का पुंज कहा गया है। अच्छी और बुरी आदतें व्यक्ति को अच्छे और बुरे रास्ते पर ले जाकर उसके चरित्र को सामाजिक रूप से वांछित और अवांछित बनाने का कार्य करती है। अतः बालकों मे शुरु से ही अच्छी-अच्छी आदते डालने का प्रयास किया जाना चाहिए। बुरी आदतें चरित्र के लिए घुन का कार्य करती हैं, बच्चों को यथासम्भव इनसे छुटकारा दिलाने का प्रयत्न करना चाहिये।

4. उचित आदर्शों का विकास (Development of worthy ideals)—व्यक्ति की अपनी मान्यतायें, मूल्य और आदर्श उसके चरित्र को प्रतिबिम्बित करते हैं। किसी एक परिस्थिति में वह जैसा व्यवहार करता है उसके पीछे उसके जीवन के लक्ष्य और आदर्शों की छाप होती है। जितने ऊँचे और अच्छे जीवन मूल्य एवं आदर्श होंगे उसका चरित्र उतना ही सशक्त और उत्तम होगा। इसलिए बालकों को उचित आदर्श एवं जीवन मूल्य अपनाने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिये।

5. उचित स्थायीभावों का विकास एवं संगठन (Organisation and development of proper sentiments)—चरित्र को स्थायीभावों की एक व्यवस्था एवं संगठन का नाम दिया जाता है। इसलिए बच्चों में स्वरूप और सुन्दर स्थायी भावों के निर्माण और उनके स्थायी सगठन के बारे में प्रयत्न किये जाने चाहियें। इसके लिये सबसे पहले अच्छे स्थायीभावों जैसे देशभक्ति का स्थायीभाव, सामाजिक स्थायीभाव, बौद्धिक स्थायीभाव, सौन्दर्यात्मक स्थायीभाव और आत्मसम्मान के स्थायीभाव आदि के विकास के लिए प्रयत्न किये जाने चाहिये। आत्मसम्मान के तत्पश्चात् ये सभी सकारात्मक और अनुकूल स्थायीभाव के माध्यम से अच्छी प्रकार संगठित किये जाने चाहिएं। वास्तव में चरित्र की सशक्तता, आत्मसम्मान या आत्म-गौरव के स्थायीभाव पर निर्भर करती है। अतः बच्चों में इस स्थायीभाव को ठीक प्रकार से विकसित करने के लिए हर सम्भव प्रयत्न किये जाने चाहिएं। इस महत्त्वपूर्ण स्थायीभाव के विकास के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना उपयोगी सिद्ध हो सकता है :

(i) बच्चे की वैयक्तिकता (Individuality) का पूरा-पूरा सम्मान किया जाना चाहिए।

(ii) बच्चे को अपने दिन प्रतिदिन के कार्यों को करने के लिए आवश्यक स्वतन्त्रता प्रदान की जानी चाहिए।

(iii) उसे अपना कार्य अपने आप करने के लिए प्रोत्साहित किया जाना चाहिए। उसमें आत्मविश्वास की भावना भरने का प्रयत्न करना चाहिए।

(iv) बच्चा अपने आपको सुरक्षित अनुभव करे तथा उसे उचित प्यार और स्नेह मिलता रहे। इसके लिए अनुकूल प्रयत्न किये जाने चाहिए।

(v) घर, विद्यालय और सामाजिक जीवन में अपने उत्तरदायित्व को भली-भाँति निभा सकने के लिए बच्चों को उचित प्रशिक्षण और प्रेरणा दी जानी चाहिए।

6. सुझाव और चरित्र निर्माण (Suggestion and character building)—चारित्रिक विकास में सुझावों का भी बहुत महत्त्व है। बच्चे भोले होते हैं। उन पर सुझावों का गहरा प्रभाव पड़ता है। अतः सुझावों को चरित्र निर्माण के कार्य में भली-भाँति प्रयोग में लाया जा सकता है। लेकिन जहाँ तक सम्भव हो बच्चों के व्यवहार मे अनुकूल परिवर्तन लाने के लिए सकारात्मक सुझाव (Positive Suggestions) की ही सहायता ली जानी चाहिए। इसके लिए बच्चो को सुन्दर एवं स्वस्थ कहानियाँ सुनाई जा सकती हैं तथा महान् व्यक्तियों के संस्मरण और जीवन वृत्तान्तों से उन्हें परिचित कराया जा सकता है। अध्यापक और माता-पिताओं को स्वयं अपने रहन-सहन और व्यवहार के द्वारा जीते जागते उदाहरण बच्चों के सम्मुख रखने चाहिएं। चरित्र निर्माण की दिशा मे कदम रखने के पश्चात् बच्चों को बराबर यह बताते रहना कि वे यथेष्ट रूप में उन्नति कर रहे हैं, उनका चारित्रिक स्तर ऊँचा उठ रहा है, वे उत्तम और अति उत्तम बनते जा रहे हैं, बहुत ही लाभदायक सिद्ध होता है। इस प्रकार के आत्म-सुझावों द्वारा वे चारित्रिक विकास की सीढ़ियाँ सफलतापूर्वक चढ़ सकते हैं।

7. अनुकरण और चारित्रिक विकास (Imitation and character building)—बच्चा स्वभाव से ही अनुकरण अवश्य करता है। उसके लिए माता-पिता, अन्य बडे लोग तथा अध्यापक आदर्श होते हैं। यह जाने अनजाने उनका अनुकरण करता रहता है। इसलिए यह आवश्यक हो जाता है कि अध्यापक, माता-पिता और समाज के अन्य उत्तरदायित्वपूर्ण व्यक्तियों द्वारा अपने व्यवहार और चरित्र को लेकर अच्छे उदाहरण बच्चों के सामने रखे जायें। उन्हें इस बात का ध्यान रहना चाहिए कि बालकों को सदैव स्वस्थ और प्रेरक वातावरण ही मिलना चाहिए तथा उन्हें बुरी संगत और बुरी बातों के दुष्प्रभाव से बचाया जाना चाहिए।

8. पुरस्कार और दण्ड का समुचित प्रयोग (Proper use of reward and punishment)—चरित्र निर्माण में पुरस्कार और दण्ड दोनों का ही महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज के मनोवैज्ञानिक और प्रजातांत्रिक युग में बच्चों के चरित्र निर्माण के लिए उन्हें दण्ड देना अच्छा नहीं समझा जाता। यह कहा जाता है कि डांट फटकार, निन्दा, ताड़ना, जुर्माना, मारपीट आदि दण्डों से बजाय लाभ के हानि की सम्भावना अधिक रहती है। इस प्रकार के उपायों को नकारात्मक (Negative) माना जाता है जिनके द्वारा बच्चो में डर बिठा कर उन्हें बुरा व्यवहार करने से रोका जा सकता है। परन्तु इसके द्वारा उनमें अच्छा व्यवहार कर सकने की क्षमता, योग्यता और अभिवृत्ति (Attitude) का विकास नहीं किया जा सकता। दण्ड के विषय में इस प्रकार के विचार बहुत कुछ ठीक हैं परन्तु फिर भी शिक्षा प्रणाली में इसके प्रयोग को समाप्त कर देना ठीक नहीं जान पड़ता। आदर्श की बात और है परन्तु वास्तविकता यही है कि भय के बिना बच्चों को चारित्रिक बुराइयों से दूर नहीं रखा जा सकता। कई बार तो अच्छी बातें सीखने के लिए तैयार करने में भी दण्ड का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होता है। परन्तु फिर भी जहाँ तक हो सके दण्ड का प्रयोग उसी अवस्था में किया जाना चाहिए जबकि समझाने बुझाने और अन्य सकारात्मक उपायो जैसे पुरस्कार, प्रशंसा, प्रोत्साहन आदि का उन पर कोई प्रभाव पड़ता न दिखाई दे।

9. नैतिक और धार्मिक शिक्षा प्रदान करना (Providing moral and religious education)—चरित्र निर्माण में नैतिक और धार्मिक शिक्षा की उपयोगिता भी असंदिग्ध है। अतः विद्यालय पाठ्यक्रम में इसे आवश्यक स्थान प्रदान किया जाना चाहिए। अब प्रश्न यह उठता है कि भारत जैसे धर्म निरपेक्ष राज्य में धार्मिक शिक्षा का स्वरूप क्या हो। इस प्रकार की शिक्षा बहुत ही संकुचित और रूढ़िवादी धार्मिकता पर आधारित नहीं होनी चाहिए। वास्तव में इसे विभिन्न धर्मों की धर्मान्धता और परम्परागत आचार संहिता से दूर रह कर नैतिक और मानवीय मूल्यो की प्राप्ति को अपना ध्येय बनाना चाहिए। ऐसी शिक्षा द्वारा "सभी धर्म अच्छे हैं, तथा धर्म चाहे जो भी हो हम सभी एक ही ईश्वर—चाहे वह राम हो या रहीम, ईसा या मुहम्मद—की सन्तान है" आदि भावनायें बच्चों के अन्दर भरी जानी चाहिएं।

रोचक कहानी और कथानकों के माध्यम से बच्चों को नैतिक शिक्षा सरलतापूर्वक दी जा सकती है। इस दिशा में हितोपदेश और पंचतन्त्र की कहानियाँ बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती हैं। महान् व्यक्तियों की जीवनगाथा और संस्मरणों को भी उपयोग में लाया जा सकता है। इतिहास, साहित्य और सामाजिक विषयों की पुस्तकों में नैतिक विचार उत्पन्न करने वाले पाठ शामिल किये जा सकते हैं। इसके अतिरिक्त प्रार्थना सभा, महान् पुरुषों के प्रवचन एवं नैतिकता सम्बन्धी व्याख्यानों तथा अन्य पाठान्तर क्रियाओं के माध्यम से बच्चों में नैतिक और धार्मिक भाव उत्पन्न करके उनके चरित्र को ऊँचा उठाया जा सकता है।

10. बच्चों का सामाजिक विकास (Social development of the child)—सामाजिक विकास और चारित्रिक विकास में धनात्मक सहसम्बन्ध (Positive Correlation) है। सामाजिक रूप से विकसित एक बच्चा सदैव ही समाज के आदर्शों और मूल्यों के अनुकूल व्यवहार करने का प्रयत्न करता है और इसलिए वह अपने चरित्र पर कोई भी धब्बा नहीं लगने देना चाहता। इस प्रकार से सामाजिकता का विकास चरित्र निर्माण की दिशा में एक महत्त्वपूर्ण रचनात्मक कदम माना जा सकता है। इस दृष्टिकोण से सामाजिक विकास की ओर पूरा ध्यान देने की आवश्यकता है। उनमें आवश्यक सामाजिक गुणों का समावेश हो सके तथा वे सामाजिक सम्बन्धों का अच्छी तरह निर्वाह कर समाज के उत्तरदायित्वपूर्ण

सदस्यों की भाँति व्यवहार कर सकें, इस लक्ष्य की प्राप्ति के लिए माता–पिता तथा अध्यापकों द्वारा उन्हें पूरा-पूरा सहयोग दिया जाना चाहिये।

11. बच्चे का उचित मानसिक विकास (Proper mental development of the child)—चारित्रिक विकास और मानसिक विकास में भी गहरा सम्बन्ध है। चरित्र में निहित विभिन्न तत्त्वों के संयोजन में बुद्धि एक महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती है। एक व्यक्ति किसी एक विशेष परिस्थिति में किस प्रकार व्यवहार करेगा और किस प्रकार जीवन की वास्तविकताओं का सामना करेगा, यह बहुत कुछ उसकी मानसिक योग्यताओं और क्षमताओं पर निर्भर करता है। अतः बच्चों को सोचने-विचारने की शक्ति, कल्पना शक्ति, स्मरण शक्ति, एकाग्रता आदि विभिन्न मानसिक शक्तियों के विकास के लिए समुचित कदम उठाये जाने चाहियें।

12. चारित्रिक विकास में विद्यालय, परिवार और समाज का उत्तरदायित्व (The Role of the school, family and the society in character development)—चरित्र निर्माण में वातावरण सम्बन्धी शक्तियां महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। घर, विद्यालय और सामाजिक परिवेश में जो कुछ भी घटित होता है उसका प्रभाव बच्चे के चरित्र पर अवश्य पड़ता है। सबसे पहले चरित्र सम्बन्धी प्रथम पाठ बच्चा अपने पारिवारिक परिवेश में अपने माता-पिता तथा परिवार के सदस्यों से सीखता है। घर के अतिरिक्त पास पड़ोस, समुदाय तथा सामाजिक परिवेश की अन्य शक्तियां भी बच्चे के चरित्र को प्रभावित करती हैं। जब वह विद्यालय जाता है तब विद्यालय का वातावरण, साथ पढ़ने वाले विद्यार्थियों तथा शिक्षकों के व्यवहार एवं चरित्र की छाप उस पर अवश्य पड़ती है। अतः यह आवश्यक है कि परिवार, विद्यालय तथा सामाजिक परिवेश की अन्य इकाइयों द्वारा बालकों को स्वस्थ एवं प्रेरणादायक सामाजिक वातावरण प्रदान किया जाये ताकि बच्चे अपने चारित्रिक विकास के लिए आवश्यक सुन्दर एवं स्वस्थ आदतों और गुणों को ग्रहण कर सकें।

वास्तव में ध्यान से देखा जाये तो चरित्र-निर्माण एक बृहत कार्य है। इसे भली-भाँति सम्पन्न करने के लिए इसे प्रभावित करने वाले सभी व्यक्ति और सामाजिक शक्तियों का एक जुट हो जाना अत्यन्त आवश्यक है। जो कुछ भी साधन हमारे पास हैं तथा जो भी विधियाँ और तकनीक काम में लाई जा सकती हैं उन सबका प्रयोग इस कार्य के लिए किया जाना चाहिये। स्किनर (Skinner) और हैरीमन (Harriman) इन्हीं विचारों को अनुमोदित करते हुए लिखते हैं :

"ऐसा कोई पाठ्यक्रम या विधि नहीं है जो कि जादू के जोर से चरित्र का निर्माण कर सके। इसके विपरीत घर, चर्च, खेलने के मैदान अथवा विद्यालय में होने वाला प्रत्येक अनुभव चारित्रिक विकास के लिए एक अवसर प्रदान करता है।" (1937, p. 261)

वस्तुतः चारित्रिक विकास एक सर्वांगीण विकास होने के नाते बहुमुखी प्रयास चाहता है। अतः चरित्र के विकास को प्रभावित करने वाले सभी कारकों या तत्त्वों के ऊपर पूरा-पूरा ध्यान रखते हुए सुगठित और संतुलित योजना तैयार की जानी चाहिये तथा उसे पूर्ण ईमानदारी और तत्परता के साथ क्रियान्वित किया जाना चाहिये।